मनुष्य बना

शुभ संकल्प,

प्रेम,

क्षमा,

निष्काम कर्म,

ब्रह्म

303187
4.94
BANSWADA
3/15

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की २२ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए बी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य ३०.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४३ | मार्च-९४ | अङ्क— ६

प्रेम धारा से :

शब्द

जिस शरीर पर फूल रहा है, इसके बारे सोच जरा।
चार दिनों की यह है चाँदनी, काल अन्धेरा सर पे खड़ा ॥
तू क्या इससे भोग भोगता, भोग रहा है यह तुमको।
इक दिन होगा राख की ढेरी, संजोग रहा है यह तुमको ॥
व्यर्थ अनर्थ समय क्यों खोता, समय न वापस आयेगा।
जीवन की सामिग्री देगा, फिर भी इसे न पायेगा ॥
वक्त की कदर करी नहीं जिसने, वह पीछे पछतायेगा।
गया वक्त फिर हाथ न आवे, लाख तू जोर लगायेगा ॥
वक्त है तेरे पास प्रागी, मुफ्त में वक्त गंवाये क्यों ?
विषय विकार में तू इसको खोकर, फिर पछताये क्यों ?
यह गंगा का पानी भाई, वापिस कभी न आयेगा।
मानुष जन्म की ऐसी लीला, मुश्किल से फिर पायेगा ॥
क्यों सोया है गहरी निद्रा, उठ और नाम का सुमिरन कर।
नाम ही काम आयेगा तेरे, गुरु चरणों में सीस को धर ॥
नाम की युक्ति लेकर गुरु से, नाम की कमाई करता जा।
नाम के रास्ते में जो बाधक, उनकी संगत हरता जा ॥

(शिवव्रतलाल जी महाराज)

कश्यप ऋषि की कथा

अत्रेय ऋषि का चुप होना था कि विश्वामित्र जी ने कश्यप ऋषि से हाथ जोड़कर कहा—

प्रजापते ! अब कृपया आप अपनी कथा सुनाइये। आपके जीवन की घटनायें अति हर्ष वर्द्धक और शिक्षाप्रद होंगी। आप सब ऋषियों में बड़े हैं और हम सब लोग बड़े चाव से आपके व्याख्यान को सुनेंगे।

कश्यप ऋषि बोले—

अमृत विष एक संग हैं, देखा नैन उधार।
द्वद रूप यह जगत हैं, सज्जन करो विचार॥
चलती चक्की देखकर, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन बिच आन के, साबित रहा न कोय॥

मैं क्या कहूँ क्या न कहूँ। कहते हुए लज्जा आती है। नहीं कहता हूँ तब भी लाज है। तुम मेरा वृतांत जानना चाहते हो। तुमको अधिकार है कि तुम मेरी कथा सुनो।

अपने घर की निंदा, पराये घर की हँसी

मेरे वृतान्त इस प्रकार के हैं मगर इनमें से मैंने बड़े बड़े तजुर्बे प्राप्त किये हैं इसलिये तुमको अवश्य सुनाऊंगा ताकि

तुमको भी विचार करने का अवसर हाथ आवे।

सुनो ! ब्रह्मा जी के एक मानस पुत्र हुये हैं जिनका नाम मरीचि ऋषि था। मैं उनका पुत्र हूं। मेरा नाम अरिष्टनेमि भी है। मेरी माता का नाम कला था। यह कर्दम ऋषि की पुत्री और महामुनि कपिल की बहिन थी। इसलिये अत्रेय ऋषि के साथ एक प्रकार का विशेष सम्बन्ध है। मैं मुनियों में बडा तेजस्वी प्रतापी और भाग्यवान समझा जाता हूं। मेरे सर के बाल तपाये हुये कुन्दन के समान चमकते हैं और यही कारण है कि किसी को मेरे सम्मुख आने का साहस नहीं होता और सबके हृदय पर मेरा प्रभाव जम जाता है।

मैं जब युवा अवस्था को पहुंचा दक्ष प्रजापति की तेरह कन्यायें मुझको विवाही गई, जिनके नाम ये हैं। दिति, अदिति, दनायू, काला कपिला, क्रोधा, इला, विन्ता, संधिका, मुनि, कद्रू, प्राधा आदि।

इनमें से दिति और अदिति को सब पर श्रेष्ठता का पद प्राप्त है। और फिर इन दोनों में से मैं अदिति को अधिक प्यार करता था।

मेरी जितनी सन्तानें हैं उतनी किसी की भी नहीं हैं। यह कारण है कि मेरा सब प्रजातियों में सबसे अधिक सम्मान है। और यह प्रचलित है कि चाहें कोई किसी ऋषि के गोत्र में हो मगर जब वह अपना गोत्र भूल जाता है तो वह मेरे ही गोत्र में गिना जाता है।

दिति से जो मेरी सन्तान हुई वह राक्षस, दैत्य, दानव व मयदानव आदि कहलाये। अदिति की सन्तान देवता आदि हैं। सृष्टि में देव, दैत्य, मनुष्य अधिकतर मेरे ही वंशज है। मैं मन्त्रदृष्टा ऋषि हूं। वेदो का जानने वाला हूं अतएव

मुझको प्रजा के वृद्धि के सारे भेद ज्ञात है और उनसे लाभ उठाकर मैंने अपनी सन्तान सबसे अधिक बड़ा ली। यहाँ तक कि सारे ब्रह्माण्ड में मेरी ही सन्तान अधिकतर फैली हुई है।

मगर आप जानते हैं कि जिसके एक से अधिक स्त्री होती हैं उसकी क्या दशा होती है। रोज-रोज की लड़ाई रहती है। एक सौत दूसरे से लड़ती है। एक सौत की सन्तान दूसरी सौत की सन्तान दुश्मन बन जाती है और लड़ती हैं। जो प्रेम भाई-भाई में होना चाहिये वह नहीं रहता। एक दूसरे के विपक्षी बन जाते है। और रात दिन इसी चिन्ता में रहते है कि एक दूसरे का कैसे नीचा दिखाये और अपनी श्रष्ठता प्राप्त करें।

यही कारण है कि मेरी सन्तान में अत्यन्त खेंचातान का सामान सदा से उपस्थित है और वह अब तक बराबर लड़ते झगड़ते चले आ रहे हैं और देवासुर संग्राम के दृश्य हर समय मेरी दृष्टि के सम्मुख रहते हैं।

अपनी सन्तान का वृतान्त क्या सुनाऊँ। सोचते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। एक बार की कथा है। राजा बलि जो दैत्य हैं बड़ा प्रतापी हा गया। देवताओं ने उस पर विजय प्राप्त करना चाहा। उसमें दान देने का बड़ा गुण था। वह किसी प्रकार पराजय नहीं होता था। तब इन्द्र की सहायता से विष्णु ने मेरी स्त्री अदिति के गर्भ में बामन अवतार धारण किया और मोहनी रूप बनाकर उसको छला और उसका राजपाट छीन कर इन्द्र को दे दिया।

इसी प्रकार दूसरे अवसर पर हिरण्य कश्यप के मारने के लिये प्रहलाद की भक्ति के सिलसिले में नृसिंह का अवतार

हुआ।

सन्तान की ममता सबको होती है। देवता और दानव दोनों मुझको प्यारे हैं मगर मैं इनकी लड़ाई झगड़े से अधिक तंग हो गया और घर बार छोड़कर मेरु पर्वत पर तप करने चला गया। दिति ने अवसर देखकर अपनी सन्तान को मेरे पास भेजा ताकि वह देवताओं की अनुपस्थिति में मुझको प्रसन्न करके वह बात पूछ लेवे जिससे उनको देवताओं पर विजय हो। मैंने उस अवसर पर जो शिक्षा दैत्यों को दी वह तुमको सुनाता हूं। मैंने उनसे कहा कि ऐ मयदानव! यह सत्य है कि तुममें विद्या व बुद्धि है मगर तुममें से किसी को न सच्चे मार्ग की खोज है न सच्चाई का प्यार है। तुम समझते हो कि ऊपरी विद्या से तुम अपनी भलाई कर लोगे। यह तुम्हारी भूल है। सच्ची भलाई जब होगी धर्म से होगी अधर्म से कभी भलाई नहीं होती। यह सम्भव है कि कुछ दिनों के लिये मनुष्य अधर्म में प्रवृत होकर थोड़ी बहुत शक्ति प्राप्त कर ले क्योंकि शक्ति चित्त के एकाग्र करने में होती है किन्तु जो लोग भलाई पर अपने चित्त को एकाग्र करते हैं उनकी भलाई बहुत दिनों तक होती है। जो अपने चित्त को बुराई पर एकाग्र करते हैं उनकी बाहरी देखने में भलाई कुछ दिनों की होती है और वह शीघ्र ही विनाश को प्राप्त हो जाते हैं। देवताओं को जो तुम पर श्रेष्ठता प्राप्त है उसका कारण यह है कि उनमें अधिक अंग सच्चाई व धर्म का होता है। वह तीन चौथाई अच्छे और एक चौथाई बुरे है क्योंकि उनमें भीं ईर्षा, डाह व कपट की आदतें होती हैं और जब इस ओर उनका झुकाव होता है वह कमजोर होते हैं और तुम अपनी एक चौथाई भलाई के साधन से उन

उन पर विजयी हो जाते हो। तुमसे तीन चौथाई बुराई व एक चौथाई भलाई है। यदि देवता सदा भलाई की ओर झुके रहें तो तुमको कभी विजय प्राप्त न हो। मैं तुमको यह मन्त्र दूंगा जो तुममें भलाई हो उसी की वृद्धि करो ताकि यदि देवताओं से बढ़कर नहीं तो उनसे घटकर भी न रहो।

मैंने यह सब बातें दैत्यों को सिखायी पर वह सीधे रास्ते पर नहीं आये और लड़ाई-झगड़े से ही काम रखा, जिसका परिणाम यह हुआ कि देवता भी उनसे लड़ते झगड़ते रहे। एक बार का प्रसंग है कि मयदानव और सूय पर्व में बातों बातों में लड़ाई हो गई और इन्द्र ने मयदानव पर वज्र चलाया। मुझको यह दशा देखकर क्रोध आया और मैंने इन्द्र को डांट-फटकार की और बुरा भला कहा।

ऐ ऋषियों मैं तुमसे क्या कहूँ! मेरी सन्तान बड़ी लड़ाका है। उनको लड़ाई भिड़ाई के सिवाय और कोई काम नहीं इन सब झगड़ों को देखकर मैंने अपने नाम से एक स्मृति बनाई कि लोग उसके आदेशानुसार काम करें। लड़ने झगड़ने से बचें। इस स्मृति में मैंने हर प्रकार के धर्म-कर्म आदि का वर्णन किया है। जो जिस तरह का है, जिसका जैसा स्वभाव व प्रकृति है सब उसी के अनुसार वर्ताव करें। धर्म को कभी हाथ से न जाने दें। कोई किसी पर अत्याचार और सख्ती न करे और न पक्षपात से काम ले। मैंने जो कुछ मुझसे हो सका किया मगर मेरी सन्तान में कभी मेल मिलाप नहीं हुआ और देवासुर संग्राम का क्रम सदा जारी रहता है जिसका प्रायः बहुत दुःख हुआ करता है।

अन्त में जब मैंने देखा कि इस प्रकार यह देवता और

असुर मानने वाले नहीं हैं और मेरी तरह स्त्रियों की सन्तान लड़ने-भिड़ने से न मानेगी मैं मेरूपर्वत पर चला गया और जिस प्रकार शिवजी कैलाश के शिखर पर रहकर परमात्मा का ध्यान करते हैं मैं भी ब्रह्म के ध्यान में मग्न रहने लगा। जो व्यक्ति एक से अधिक स्त्रियाँ करता है और जिसके यहाँ आवश्यकता से अधिक सन्तान होती हैं याद रक्खो उसके घर में कभी शाँति और कुशलता नहीं होगी और अन्त में मेरी तरह उसको भी किसी और प्रकार शान्ति खोजनी पड़ेगी। ऐ ऋषियों ! यह मेरी संक्षेप कहानी है जो मैंने आपके सम्मुख वर्णन की है। मेरे वृतान्त बहुत हैं। मैं क्या तुमको सुनाऊँ। केवल इतना ही पर्याप्त है।

विश्वामित्र ने कहा—भगवान कश्यप ! इसमें सन्देह नहीं कि आपकी कहानी बड़ी मनोरन्जक, विचित्र और शिक्षाप्रद है किंतु इसके व्याख्या की आवश्यकता है यदि आप आज्ञा दें तो मैं एक प्रश्न करता जाऊँ और आप मुझको उसका उत्तर देते जांय।

कश्यप जी—बहुत अच्छा आप पूछिये।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया —ब्रह्मा और मरीचि से क्या तात्पर्य है ?

कश्यप बोले —ब्रह्मा मन को कहते हैं और मरीचि मन के संकल्प की धार का नाम है। संस्कृत में इसके अर्थ हैं, प्रकाश की किरण। जिस समय मन में फुरना होती है उस समय उसकी गति से जो धार निकलती है व मरीचि है और जब यह धार एक स्थान पर ठहर जाती है उससे जो रूप बनता है वह कश्यप है।

विश्वामित्र ने पूछा — दक्ष प्रजपति क्या है और उसकी १३ कन्यायें जो आपको विवाहित हैं उनसे क्या तात्पर्य है ?

कश्यप जी ने उत्तर दिया —संस्कृत में दक्ष के अर्थ चतुर व योग्य के हैं। दक्ष मन की उस योग्यता को बोलते हैं जो तेरह प्रकार की धारों से नाचती रहती है। तेरह प्रकार की धारें दक्ष की तेरह कन्यायें हैं। उनको तुम पाँच कर्म इन्द्रियाँ, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ और तीन मन, बुद्धि और अहंकार समझो। यह मुझको विवाही गई हैं। यदि यह मेरे साथ न हों तो मैं प्रजा की उत्पत्ति नहीं कर सकता और न सँसार का कोई व्यवहार हो सकता है। मन की जितनी भावनायें और तरंगे हैं उनके परदे में यही १३ शक्तियाँ प्रविष्ट करके काम करती हैं और सारे जगत के दृश्य इन्हो की सन्तान हैं।

विश्वामित्र बोले—इन तेरहों में से दिति और अदित को क्यों महानता है।

कश्यप जी ने उत्तर दिया—दिति के अर्थ है काटने वाली अदिति के अर्थ हैं पृथ्वी। एक में सहन शक्ति है और दूसरे में चंचल शक्ति है। यही दोनों वृत्ति संसार में द्वन्द की रचना करती हैं। यह मन और बुद्धि दोनों में रहती हैं। आगा पोछा करना, बुरा भला करना, बनाना बिगाड़ना इनके काम हैं। तुम देखो ! जब तुम किसी काम के करने के सम्बन्ध में सोचने लगते हो तो उसमें यह दोनों बातें रहती हैं। बुराई-भलाई प्रकाश और छाया, संकल्प और विकल्प। यह सब इन्ही दोनों के अधीन है और द्वन्द की रचना में इन्ही दोनों का हाथ अधिकतर रहता है। यही कारण है कि मेरी और स्त्रियों की अपेक्षा इनको उच्च पदवी प्राप्त है।

विश्वामित्र ने कहा—देवता और दानव क्या है ?

कश्यप जी ने उत्तर दिया—मन की बुरी भावनायें दानव अथवा राक्षस हैं और मन की शुभ भावनायें देवता या सुर है। यह दोनों साथ-साथ रहते है क्योंकि मनुष्य के मन में बुरे और भले विचारों के साथ संस्कार हर समय विद्यमान रहते हैं और उनके बीच सदा विरोध की अग्नि भड़कती हुई रहती है। कभी नेकी विजयी होती है और कभी बदी विजयी होती है। बदी में अधिक निर्बलता है। नेकी में कम निर्बलता है। नेकी में अधिक शक्ति है और बदी में कम शक्ति है। किन्तु निर्बलता व शक्ति दोनों में ही है। जो मनुष्य नेकी को नेकी समझकर करता है समझ लो कि उसमें बदी अवश्य होगी क्योंकि नेकी को नेकी समझकर करना ही बदी है।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया। बलि राज क्या है ? वामन क्या है और क्यों बलि राजा को छला गया ?

कश्यप ने कहा—बलि दान देने की वह राक्षस शक्ति है जो दान के क्रम में ख्याति और बड़ाई का इच्छुक है। जो व्यक्ति दान को दान समझकर करता है और उसको अपनी नेक नामी और अपनी कीर्ति का साधन बनाता है। उसमें राक्षसी वृति होती है। इस प्रकार का दान देना प्रायः मनुष्य की गिरावट का कारण होता है क्योंकि ऐसे दान में निर्बलता रहती है और अवसरवादी मनुष्य को उसके दान के शस्त्र से मार देते हैं। दृष्टान्त है। एक शख्स नेकनामी प्राप्त करने के लिए दान दे रहा है। अब यदि कोई उसको क्षति पहुंचाना चाहे तो इतना ही पर्याप्त है कि उसकी नेक नामी को तनिक सा धक्का लगावे। वह तुरन्त क्रोधित हो

जायेगा और उसकी कीर्ति भंग हो जायेगी। लेकिन जो व्यक्ति स्वभावानुसार दान देता है और उसको उसके क्रम में मान बढ़ाई का तनिक भी ध्यान नहीं हैं तो इस व्यक्ति को कोई क्षति नहीं पहुँचा सकता क्योंकि उसके दान में कोई त्रुटि या निर्बलता नहीं है। उसका दान इस प्रकार का स्वाभाविक है जैसे प्राणी बिना किसी आपत्ति के सांस लिया करता है। बलि रूपी राक्षस वृत्ति दान में शक्तिशाली होना चाहती थी। वामन रूपी गुण की सात्विक वृत्ति ने जिसका सम्बन्ध विष्णु से है, प्रगट होकर उसको नीचा दिखाया। उसकी गलती बतला दी और वह पाताल देश को चला गया। यह वामन और बलि के प्रसग का अभिप्राय है। इसमें यह दिखाया गया है कि किस प्रकार राक्षसी वृत्ति देवताओं की वृत्ति का आधार लेकर अपनी कमी और आशक्तता के कारण मारी जा सकती है।

विश्वामित्र बोले—यह तो हो गया। अब प्रहलाद, हिरण्यकश्यप और नृसिह के प्रति आप क्या वर्णन करेंगे ?

कश्यप ने उत्तर दिया—हिरण्यकश्यप पूर्णतः राक्षसी वृत्ति है जिसने शारिरिक बल से दैवीय वृत्ति को पराजय करना चाहा था। उसने समझ लिया था कि शक्ति, बल और पराक्रम से सब कुछ हो सकता है और उत्पात मचाना शुरु कर दिया था मगर मैंने तुमसे पहले ही कहा है कि राक्षसी वृत्ति में भी एक चौथाई नेकी होती है। वह सर्वांग बुरी नहीं होती। यह नेकी की वृत्ति उसी हिरण्यकश्यप रूपी दैत्य की सन्तान प्रहलाद है जिसके कारण विष्णु की परम शक्ति सात्विक वृत्ति को शारीरिक शक्ति का नमूना बन नृसिह के रूप में प्रगट होकर हिरण्यकश्यप को मारना पड़ा।

ऐ विश्वामित्र ! मैं तुमसे सचमुच कहता हूं कि जो छल कपट के साथ अपनी बदी (बुराई) को छिपाना चाहते हैं वह छल उनका शत्रु होकर उनको मारता है और जो प्रगट रूप में बुराई करते हैं वह देखते देखते मार दिये जाते हैं।

विश्वामित्र ने कहा—आपने बहुत अच्छी बात कहीं। निस्सन्देह यह अक्षरशः ठीक है। मगर अब यह कहिये कि आपने जो कश्यप स्मृति रची है उससे आपका अभिप्राय क्या है ?

कश्यप जी बोले—स्मृति कहते हैं याद रखने को। मनुष्य के सारे अनुभव व ज्ञान स्मृति में रहते हैं। मैंने अपनी स्मरण शक्ति से काम लेकर प्राचीन अनुभव व ज्ञान को ऐसे रूप में स्थिति किया है कि मन के अच्छे व बुरे भाव उसके अधीन रहकर एक विशेष नियम पर चलें ताकि अन्तरीय प्रबन्ध और आराम में अन्तर न पड़े। बहुधा लोग इस प्रकार के तजुर्बों के आधार पर अपने जीवन के कार्यक्रम या नियम बनाया करते हैं। स्मृति रचने से मेरा इतना ही तात्पर्य्य है।

विश्वामित्र ने प्रश्न किया—अब केवल एक प्रश्न रह गया है कि मेरू क्या है और वहां शांति कैसे प्राप्त होती है ?

कश्यप जी ने उत्तर दिया —ऐ विश्वामित्र ! जब तक कि दिति, अदिति की सन्तान से सम्बन्ध है, दूसरे शब्दों में जब जब तक मन के बुरे भले भावों से काम रहता है तब तक शांति व सुख नहीं प्राप्त होता। मनुष्य कभी बुराई करता है कभी भलाई करता है। नेक व बुरे कर्मों के संस्कार दोनों मन को प्रभावित करने के इच्छुक रहते हैं। कभी भी सम्भव

नहीं है कि जिसका मन बेकाबू है वह शाँत हो सके, चाहे वह बन में जाये चाहे वह घर में रहे। हर दोनों स्थान पर उसकी एक सी दशा रहेगी। इसके लिये मनुष्य मेरू पर्वत की चोटी पर निवास करें। तुम्हारे शरीर के पीठ के पीछे जो हड्डी बीच में आती है उसका नाम मेरुदण्ड है। उसका सिलसिला सूक्ष्म व स्थूल बनता हुआ मस्तिष्क में जाकर समाप्त होता है। जहाँ यह समाप्त होता है उसी का नाम मेरू है। इस को योगी ब्रह्मरेन्द्र भी कहते हैं। यहीं सुमेरू पर्वत की चोटी भी कहलाती है।

शान्त मन जब योगाभ्यास करते हुये इस स्थान पर आकर टिक जाता है वह ब्रह्म का ध्यान करते हुये शान्ति को प्राप्त होता है। मुझको भी यहाँ शाँति प्राप्त हुई। यह मेरू की चोटी की व्याख्या है।

सत्संग

[गतांक से आगे]

राधास्वामी मत क्या है ? वासना से निर्वासना होना और वश ! शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं। यह केवल कहने सुनने का मार्ग नहीं है। मन से वासना रहित (निष्काम) होना है। जब तक मनुष्य वासना रहित न होगा, मुक्ति नहीं मिल सकती। यह ऊँची अवस्था है। इससे परे ऐसी अवस्था है जहाँ मन नहीं रहता। वहाँ अपना आपा होता है वह सत पद है। इस सत पद के बारे में कबीर की वाणी है —

हंसा लोक हमारे आइ हो।
ताते अमृत फल तुम पइ हो ।।
लोक हमारा अगम दूर है, पार न पावे कोई।
अति अधीन होय जो कोई आवे, ताको दऊँ लखाई ।।
मिरत लोक में हंसा आये, पुहुप दीप चलि जाई।
अम्ब दीप में सुमिरन करि हो, तब वह लोक दिखाई ।।
माँटो का पिंड छूट जायेगा; औ यह सकल विकारा।
ज्यों जल माहि रहत है पुरइन, ऐसे हंस हमारा ।।
लोक हमारे अइयो हंसा, तब सुख पइयो भाई।
सुख सागर असनान करोगे, अजर अमर होइ जाई ।।
कहें कबीर सुनो धर्म दासा, हंसन करो बधाई।
सेत सघा सब बैठक देहों, जुग-जुग राज कराई ।।

सुनो ! पहिले शब्द प्रकाश का रूप होता है फिर अ
शब्द और प्रकाश। फिर सुरत और शब्द से परे एक और
अवस्था हैं जहाँ मेरी हस्ती अत्यन्त सागर में प्रवेश होती

रहती है। उसका कोई अन्त नहीं है, वेअन्त है।

मैं राधास्वामी मत को क्या समझता हूँ। यह जनसाधारण को बताने की बात इसलिये नहीं है क्योंकि इसके समझने की लोगों को आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जो इस संसार में काफी ठोकरें खा चुके हैं, जिनको यह संसार दुखदाई दृष्टि पड़ता है केवल वहीं इस ओर झुकते हैं। प्रारम्भ में इस मत को गुप्त रखा था। अब भी इस मत को समझने वाले है कहाँ! यह मत यदि अनाधिकारियों को दिया गया तो न दीन के रहेंगे न दुनिया के। यह मत वास्तव में उनका है जो विषयों से उदास हो चुके है जैसा कि वाणी में कहा गया है—

विषयन से जो होय उदासा। परमारथ की जामन आशा।
धन सन्तान प्रीति नहिं जाके' जगत पदारथ चाह न ताके।
तन इन्द्री आसक न होई. नींद भूख आलस जिन खोई।
बिरह बान जिन हिरदे लागा, खोजत फिरे साँच गुरु जागा॥

यह तो निवृति मार्ग रहा। प्रवृति मार्ग में वासना रहती है। वासना रक्खो मगर साथ ही अपने विचारों को शुभ बनाओ। यही कथन वेदों का है—'शुभ संकल्प मन्तु'।

हम सब लोग गरीब हैं इसके कारण दुःखी है। हम गरीब क्यों है? यह हमारे पिछले अर्थात अब से पहिले किये हुये कर्मों का फल है। जैसा करोगे वैसा पाओगे। एक पंडित मेरे मकान में रहते है मेरा एक मित्र अमेरिका गया। उस की जन्म कुन्डली भृगुसंहिता से मिलाई गई। उसने पिछले जन्म का हाल बताया और आगे का। वह ठीक था। तो यह मानना पड़ता है कि जैसा हमने किया उसका फल भोग रहे हैं। यह संसार है इसमें सुखी रहने का सरल मार्ग है कि

मनुष्य के विचार शुभ हों।

राधास्वामी मत नया नहीं है। हाँ, इसको पहिले गुप्त रक्खा गया क्योंकि इसके अधिकारी बहुत कम थे। मगर अब इस समय में इसको गुप्त नहीं रक्खा जा रहा।

इसको गुप्त न रखने का कारण यह है कि महापुरुषों ने यह अनुभव किया है कि वर्तमान युग में जब कि घृणा, ईर्ष्या द्वेष आदि का दौर दौरा हैं सन्त मत की शिक्षा ही इसका एक मात्र इलाज है।

कृष्ण और सुदामा सदा दरिद्री रहा। क्यों? अपने कृष्ण के साथ झूठ बोला, कपट का व्यवहार किया। एक बार दोनों जंगल को लकड़ी लेने गये। गुरुमाता ने सुदामा को चने दिये कि जब भूख लगे, दोनों खा लेना। सुदामा ने उनको अकेले ही खाना शुरु कर दिया। जब कृष्ण ने पूछा कि सुदामा क्या खा रहे हो? तो सुदामा ने कह दिया कि सर्दी से दांत बज रहे हैं। उस चोरी या धोके का परिणाम यह हुआ कि सुदामा के सदा दांत बजते रहे अर्थात दरिद्र रहा जो उसके कर्म का फल था।

राधास्वामी मत की प्रारम्भिक शिक्षा में मन को शुद्ध करना है। क्योंकि यही सब दुखों का कारण है। आज कल लोग जो कष्ट उठा रहे हैं इसका कारण यही है। सब हेरा-फेरी में लगे है। घरों में एक दूसरे से छिपा कर रखते हैं। एक दूसरे से घृणा है। इस घृणा ने बड़े बड़े राज्य नष्ट कर दिये। उसका एक उदाहरण सीता का है जबकि राम हिरण के पीछे वन में चले गये थे। सीता ने लक्ष्मण से राम की सहायता को जाने को कहा मगर लक्ष्मण ने राम की आज्ञा वश जाने में हिचक की तो सीता ने उनको ताना मारा

और घृणा प्रकट की कि तुम्हारे मन में कहीं दूषित विचार तो नहीं आ गया है। परिणाम क्या हुआ ? सीता वन में हरी गई और उसे महा कष्ट भोगना पड़ा।

दूसरा उदाहरण द्रोपदी का है कि उसने दुर्योधन को ताना मारा कि अंधों की औलाद अन्धे होती है। इसका कारण महाभारत का युद्ध हुआ। हमार घरों में कटु वचनों का परिणाम यही होता है, कि घर बिगड़ जाते है।

इसलिये जो दुख सिर पर आये उसे अपना भोग समझते हुए सही। इनकी परवा न करो। यह जीने का रहस्य है। इस नियम को अपने हृदय में रक्खो।

यह मन हमेशा कला बाजियां खेलता रहता है। इसे काबू में रखने के लिये किसी इष्ट में ध्यान जमाओ। इससे प्रेम करो। यदि किसी तरह गुरु के ध्यान में मन नहीं टिकता तो न सही। किसी ऐसी सूरत का ध्यान करो जिसमें मन टिक जाय या मेरा ध्यान कर लिया करो। यह मैं अहंकार से नहीं कह रहा हूँ। जब मन लगना शुरु हो जायेगा, एकाग्रता अपने आप पैदा होगी और यही एकाग्रता उन्नति की ओर ले जायेगी।

एक मनुष्य काम भोग की तृप्ति करने को किसी स्त्री का ध्यान करता है। दिलखुश करके खुशी होता है। इसी तरह जब तुम दुखी हो तो सत पुरुष जो सुखी है प्रसन्न है और आनन्द में रहता है उसके ध्यान में सुख-शान्ति आनी चाहिए, यदि नहीं आती तो सतपुरुष में कमी है। वह गुरु अपूर्ण है है जिसके शिष्यों को या अनुयायिओं को निर्भयता या सुख शांति नहीं आती। कम यह है कि तुमको प्रेम करना नहीं

आता। तुम ध्यान भी ठीक प्रकार नहीं करते। तुम में विश्वास भी होना चाहिये। उदाहरण के रूप यों समझलो एक स्त्री बड़ी ही सुन्दर है मगर पुत्र उसका ध्यान करता है। तो उसमें काम पैदा नहीं होता। क्योंकि पुत्र के अन्दर काम का भाव ही है इसलिये तुम्हारा भाव तुम्हारी श्रद्धा व विश्वास का होना जरूरी है साथ ही गुरु का पूर्ण होना अनिवार्य है। यह है गुरु मत।

मैं राधास्वामी मत का अनुयायी हूँ मगर कैदी नहीं हूँ। तुम भी किसी मत के अनुयायी बनो मगर कैदी न बनो।

मैं दो-तीन जगह काम करता हूँ। २-३० रुपये कमा कमा लेता हूँ। क्यों इस बुढ़ापे में कमाता हूँ? क्योंकि गुरु आज्ञा थी कि अपनी रोटी आप कमाकर खाओ। ऐसी आज्ञा क्यों दी गई थी? इसलिये कि मन बुद्धि शुद्ध रहे। दूसरों की कमाई पर आश्रित न रहना पड़े। बाप-भाई की कमाई पर ध्यान न लगाओ। बाप का बेटे पर हक है मगर इतना कि वह रोटी खा सकता है। यह ग्रहस्थ जीवन गुजारने का गुर है मगर यह गुरु या राय सबके लिये समान रूप से लागू नहीं हैं।

गुरु बनना आसान काम नहीं है। गुरु दुनियां भर की शिष्य की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता है। मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण कोई पथ भ्रष्ट हो जाय या भटक जाय। जो कुछ मैं कहता हूँ वह मेरा अनुभव है। यदि मैं गलत हूँ तो आपको हक है कि उसको कहें। मैं चाहता तो लाखों रुपया इकटठा कर लेता। मगर मेरे अन्तःकरण ने आज्ञा नहीं दी।

दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज ने सत्संग लगाने की ड्यूटी लगाव और हुजूर बाबा सावन सिंह महा-

राज ने इनके लिये और भी जोर दिया। इसलिये धरा बांधा और इस काम को निबाह रहा हूँ। चाहता हूँ कि यहां मेरा यह अन्तिम सत्संग हो।

यह दुनिया कुत्ते की दुम है। मेरे जैसे कितने ही यहां आये और अपनी बोली बोल-बोल कर चले गये। जिनको लाभ उठाना होता है वह उठा लेते हैं दूसरो का कहना सुनना व्यर्थ है।

अपने जीवन को करनी के ढांचे में ढालो। इससे मनुष्य खुशी प्राप्त कर सकता है। आप लोग एक आस और विश्वास रक्खें। आपका जीवन स्वयं खुशी का जीवन होगा। मालिक का विश्वास तुमको स्वतः ही खुश रखेगा।

मुझे चेला बनाने की इच्छा नहीं। कोई जबरदस्ती चेला बन जाय तो क्या किया जाय। दीवानों काल और माया से निकलो। राधास्वामी मत की शिक्षा है कि सत पद की ओर चलो। असली गुरु तो ज्ञान है। पहले ज्ञान प्राप्त करो। बाहरी गरु से तुमको केवल संकेत मिलेगा। जिससे तुमको ज्ञान प्राप्त हो जाय। समझ आ जाय।

कबीर साहब की वाणी—'हंसा लोक हमारे आइहो' में आया है कि अति अधीन होने से वह ऊँची अवस्था प्राप्त हो सकती है। कोई पूछे कि क्या सचमुच ऐसा देश है। मैं कहतां हूँ, है, है। इस देश में क्या है? क्या कहूँ?

एक अद्भुत सुन्दर हालत है वहां मैं नहीं तू नहीं
सांच कहूँ कोई बात न माने, वहां सुरत और रूह नहीं॥
ना वहां गुरु ना वहां चेला, एक अद्भुत तत्व प्रधान है।
उस नगरी में रह रह कर देखो, फिर भी उत्थान होता है॥

उस दिन की आशा लगी, वहाँ जाऊँ फिर न जाऊँ कभी।
ना जाऊँ कभी ना आऊँ कभी, जो है सो वश वहीं रहे॥
मस्ती में आकर दिये जाता हूँ संदेशा यह जग सारा नाशवान है।
वह अजय निहारा है, अद्भुत यह देश महान है॥

मित्रो! यदि आज यह अनुभव न होता या राधास्वामी मत या कबीर की वाणी में त्रुटि प्रतीत होती तो मैं पहिला व्यक्ति होता जो मैं राधास्वामी मत या कबीर मत का खण्डन करता।

सवाल किया गया था कि राधास्वामी मत क्या?
उस सवाल का जबाव देकर के चले।
अपनी हस्ती को मिटा कर चले॥

संक्षिप्त में अपने व्यक्तित्व Individvality को मिटा कर ऐसी अवस्था को प्राप्त कर लेना जहाँ देह, मन और आत्मा का मान रहे। यह राधास्वामी मत है।

सुरत हुई अति कर मग नानी।
पुरुष अनामी जाय समानी॥

(यह राधास्वामी मत की बन्दना की अन्तिम कड़ी है)

मनुष्य को किसी बात के सही होने का दावा नहीं। अनुभव होता है। कभी ठीक होता है कभी गलत। माँग माँग और पूर्ति का नियम हर जगह काम करता है। मांगो और मिलेगा। यह विषय है। मौज ने मेरे मस्तिष्क पर सार तत्व के बयान करने की प्रेरणा की और मैं यह बर्णन करता रहता हूँ। सत्संगियों के मन से अशान्ति और भ्रान्ति जाती नहीं है क्योंकि हर एक के दिल में चोर है। जिससे

वह पूर्णतया किसी बात पर विश्वास नहीं करता। कहा है—

खुदा के पास होने का यकी मुश्किल से आता है।
वगरना जब खुदा हो पास है तो बेबसी कैसी ॥

(महर्षि शिव)

स्पष्ट बात कहने से उनकी समझ में नहीं आती। कलियुग में सन्त प्रगट हुये। वे ही लोगों की अशान्ति दूर कर सकते है। सुख शान्ति दे सकते हैं। सुख शान्ति देने वाली शान्ति का नाम ही सतगुरु है। मेरा ख्याल है कि वह शक्ति शीघ्र ही हुकुमत में आवेगी। जब घर का मुखिया अशान्त हो तो सारा परिवार दुखी और अशान्त रहेगा। हम सब लोग एक परिवार की हैसियत रखते है। हमारे घरेलू परिवार हैं और हमारा हुकुमत है (इसी प्रकार सारा राज्य एक परिवार है और हमारे लीडर और प्रधान नेता इस परिवार के मुखिया हैं) जब तक हमार नेता अशान्त हैं देश में शान्ति नहीं आ सकती और जब तक वह नानक, कबीर, राधास्वामी या उपनिषदों की शिक्षा के मानने वाले और उस पर अमल करने वाले न होंगे ईब तक उनको शान्ति नहीं मिलेगी। इसलिये मेरे विचार मैं यह शिक्षा हुकुमत में आयेगी और लोग विवश होकर उसे मानेंगे। जैसे डॉक्टर रोगी को देखकर रोग को जान लेना है और मन की दशा का अनुमान लगा लेता है और तब उसी प्रकार की दवा बनाता है। मैंने मानसिक मंगल (Mental Region) को देखकर जो अनुमान लगाया हैं उसी आधर पर मैंने यह बात कहीं है।

मैं अपने बाकी जीवन में अभी और खोज करना चाहता हूँ और देखता चाहता हूँ कि आगे भी कुछ और हैं या नहीं।

पहिले लोग ब्रह्मास्त्र और राम बाण को गप समझा करते

के होने पर विश्वास दिलाता है। ... लाइन पर चल रहा हूं और अनुभव करता जा रहा हूं।

यह सत्संग का काम आपकी सेवा के ध्येय से नहीं दिया गया किन्तु इसलिये दिया गया कि इससे वह सार वस्तु मिल जायेगी। यदि मैं यह सेवा न करता तो आपके अनुभव मेरे सामने न आते।

मैं आप लोगों का कृतज्ञ हूं। इसलिये कि आपके कर्मभोग पूरा कर रहा हूं मगर मेरा दृष्टिकोण और है और तुम्हारा दूसरा है। आप लोगों में अधिक संख्या ऐसी हैं जिनको सांसारिक वस्तु की आवश्यकता है मगर याद रक्खो कि असली वस्तु जिसके पाने से मनुष्य को शांति मिलती है वह तब मिल सकेगी जब पहिले दुनिया से उपराम हो। यहीं वैराग का प्रारम्भ है।

'मैं देखता हूं कि इस समय सत्संगियों में बहुत त्रुटियां हैं। वह एक दूसरे से घृणा करते हैं। तुम में से कोई किसी गद्दी वाले से घृणा करता है कोई मुझसे घृणा करता है। कोई घर वालों से और कोई किसी से। परिणाम यह है कि हम सब लोग भाई-भाई बनकर नहीं रह सकते। मत और पन्थों में भी यही झगड़े हैं।

मेरी शिक्षा इस समय के लिये उपयुक्त चाहे न हो मगर है आवश्यक। मेरी शिक्षा जहां लाभदायक है वहां मेरे स्पष्ट वर्णन की बहुत सों को आवश्यकता नहीं, भलाई का काम करने और अमल करने में है। माला फेरने वाले जनता का भला नहीं कर सकते।

सन्त कबीर साहब का भी ऐसा कथन है।

माला फेरू न हरि भजूं, मुख से कहूँ न राम।
मेरा राम जब मोही भजे, तब पाऊँ विश्राम ॥

मगर यह अवस्था निचले दर्जों को पार करने के बाद आती है। इसलिये साधू महात्माओं की जरूरत है। मेरी इच्छा है कि यदि ये साधू-महात्मा अपना काम सच्चाई से से करें और सुधर जायं तो मैं समझता हूं कि आम जनता सुधर जायेगी।

सत्संग में एक सत्संगी ने प्रश्न किया कि जीव विश्वास आप करता है या गुरु कराता है। उत्तर दिया गया —

कुछ करनी कुछ करम गति, कछुक पूर्व ले लेख।
देखो भाग कबीर का, लख से भया अलेख ॥

इस ओर रूझान होना सौभाग्य की बात समझनी चाहिये। जीवों को चाहिये कि वह एक में विश्वास करें। ऐसी वृति स्वयं अपनी इच्छा से होनी चाहिये मगर देखने में आता है कि लोगों की ऐसी वृति नही हैं। वे विश्वास नहीं करते फिर भी गुरु लोग जीवों को विश्वास करने पर जोर दिये जा रहे हैं और विश्वास दिलाने को रोचक और भयानक बातें कहते हैं। इसलिये समय के बाद वह विश्वास टूट जाता है।

क्रोध एक विषधर सर्प है

क्रोध का मन के अन्य विकारों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्रोध के वशीभूत होकर हमें उचित-अनुचित का विवेक नहीं रहता और हम हाथापाई कर बैठते हैं। बातों बात में उखड़ जाना, लडाई झगड़ा करना साधारण सी बात है। यदि तुरन्त क्रोध का निवारण हो जाय तब तो मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से ठीक है, पर यदि यह अन्तः प्रदेश में पहुँच कर एक भावना ग्रन्थि बन जाय तो बड़ा ही दुःखदायी होता है। बहुत दिनों तक टिका हुआ क्रोध बैर कहलाता है। बैर एक ऐसी मानसिक बीमारी है जिसका कुफल मनुष्य को दैनिक जीवन में भुगतना पड़ता है। वह अपने आपको सन्तुलित नहीं कर पाता। जिससे उसका बैर है, उसके उत्तम गुण, भलाई, पुराना प्रेम उच्च संस्कार आदि सब वह विस्मृत कर बैठता है। स्थायी रूप से एक भावना ग्रन्थि बन जाने से क्रोध का वेग तो धीमा पड़ जाता है किंतु दूसरे व्यक्ति को सजा देने, नुकसान पहुँचाने या पीड़ित करने की कुत्सित भावना निरन्तर मन को दग्ध किया करती है।

बैर पुरानी जीर्ण मानसिक बीमारी है, क्रोध तत्कालीन और क्षणिक प्रमाद है। क्रोध में पागल होकर मनुष्य सोचने का समय नहीं देखता, बैर उसके लिये बहुत समय लेता है। क्रोध में अस्थिरता, क्षणिकता तत्कालीनता, बुद्धि का कुण्ठित हो जाना, उद्विग्नता, आत्मरक्षा, अहंकारी, पुष्टि, असहिष्णुता दूसरे को दण्डित करने की भावनायें संयुक्त हैं। बैर में सोचने समझने, प्रतिशोध लेने का समय होता है। हम अच्छी तरह सोचते हैं, कुछ समय लेते हैं और तब बदला लेते हैं। पं०

श्री रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में—'दुःख पहुँचने के साथ ही दुःखदाता को पीड़ित करने की प्रेरणा करने वाला भाव बैर है, किसी ने आपको गाली दी, यदि आपने उसी समय उसे मार दिया तो आपने क्रोध किया। मान लीजिये कि वह गाली देकर भाग गया और दो महीने बाद आपको मिला। अब यदि आपने उससे बिना फिर गाली सुने मिलने के साथ ही उसे मार दिया तो यह आपका बैर निकालना हुआ।'

बैर धारण शक्ति अर्थात भवों को संचित कर मन में रोक रखने की शक्ति की आवश्यकता होती है। जिन प्राणियों में पुराने क्रोध को संचित रखने की शक्ति विद्यमान है, वे ही बैर कर सकते हैं। क्रोध तो पशु, पक्षी, मनुष्य अर्थात सभी प्राणियों को अस्थिर और पागल करने में पूर्ण सामर्थ है किंतु बैर यह कार्य नहीं कर सकता। बैर में स्थायित्व है।

क्रोध की मात्रा कम या अधिक, तेज या हल्की हो सकती है चिड़चिड़ाहट क्रोध का हल्का रूप है। साधारण भूलों या या मामूली खराबियों, कमजोरियों या मामूली बुराइयों अथवा भद्दी बातों पर हम उद्विग्न होते हैं। पर यह उग्रता उतनी तेज नहीं होती। थोड़ी देर रहकर शान्त हो जाती है, कभी अन्य किन्हीं कारणों से हम परेशान रहते हैं, कुछ अप्रिय हो जाने से दुःखी होते है, ऐसी मनोदशा में साधारण सी बात होते ही हम चिड़चिड़ा उठते हैं।

चिड़चिड़ाहट में सामान्य कारण ही उद्विग्नता उत्पन्न करने में समर्थ है। यह एक मानसिक दुर्बलता है जो अनेक कारणों से उत्पन्न हो सकती है। जिस व्यक्ति को पुनः-पुनः डरायो, धमकाया जाय या जिससे अधिक कार्य लिया जाय,

क्रोध के अधिक अवसर प्राप्त हों और मन शान्त दशा में न आ सके तो क्रोध स्वभाव का एक अङ्ग बन जाता है। यह फिर जरा सी असुविधा या कठिनाई में हल्के स्वरुप में प्रकाशित हुआ करता है।

चिड़चिड़ाहट प्रायः वृद्धों में अधिक देखने में आती है। रोगी अपनी दुर्बलता के कारण जरा-जरा सी बात पर तिनक उठते हैं, औरते काम से परेशान होकर इतनी उद्विग्न रहती हैं कि मामूली सी बात पर चिड़चिड़ा जाती हैं। अध्यापक विद्यार्थियों की काँव-काव सुनते सुनते इतने दुःखी हो उठते हैं कि तिनक उठते हैं। दुकानदानर प्रायः ग्राहकों से जल भुन कर इस मानसिक दुर्बलता के शिकार बनते हैं। धार्मिक रूढ़िवादी दुनियाँ को देखकर जीवन भर बड़बड़ाया करते हैं।

क्रोध मन को एक उत्तेजित और खिंची हुई स्थिति में रख देता है जिसके परिणाम स्वरूप मन दूषित विकारों से भर जाता है। क्रोध से प्रथम तो उद्वेग उत्पन्न होता है। मन एक गुप्त किंतु तीव्र पीड़ा से दग्ध होने लगता हैं। रक्त में गरमी आ जाती है और उसका प्रवाह तेज हो जाता हैं। इस गर्मी से मनुष्य के शुभ भाव—दया, प्रेम, सत्य न्याय, विवेक बुद्धि आदि जल जाते हैं।

क्रोध एक प्रकार का भूत है, जिसके सवार होते ही मनुष्य आपे में नहीं रहता। उस पर किसी दूसरी सत्ता का प्रभाव हो जाता है। मन की निन्द्य वृत्तियाँ उस पर अपनी राक्षसी माया चढ़ा देती है, वह बेचारा इतना हतबुद्धि हो जाता है कि उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि वह क्या कर रहा है।

आधुनिक मनुष्य का आन्तरिक जीवन और मानसिक अवस्था अत्यन्त विक्षुब्ध है, दूसरों में वह अनिष्ट देखता है।

उनसे हानि होने की कुकल्पना में डूबा रहता है। जीवनपर्यन्त इधर-उधर लुढ़कता, ठुकराया जाता रहता है। शोक, दुःख, चिन्ता-अविश्वास, उद्वेग-व्याकुलता आदि विकारों के वशीभूत होता रहता है। ये क्रोधजन्य मनोविकार अपना विष फैलाकर मनुष्य के जीवन को विषैला बना रहे हैं। उनकी आध्यात्मिक शक्तियों का शोषण कर रहे हैं, साधना का सब से बड़ा विघ्न क्रोध नाम का राक्षस ही है।

क्रोध शान्ति भङ्ग करने वाला मनो विकार है। एक बार क्रोध आते ही मन की अवस्था विचलित हो उठती है। श्वासोच्छवास तीव्र हो उठता है, हृदय विक्षुब्ध हो उठता है यह अवस्था आत्मिक विकास के विपरीत है। आत्म उन्नति के लिये शान्ति, प्रसन्नता, प्रेम और सद्भाव चाहिये।

क्रोध का स्वास्थ्य पर प्रभाव

स्वास्थ्य का मन से अकाट्य सम्बन्ध है? उत्तम स्वास्थ्य का मन की शान्ति उत्साहपूर्ण, आशावादी, सचेष्ट, सत् प्रेरणा तथा शुद्ध मनः स्थिति से सम्बन्ध होता है। हमारा आन्तरिक प्रेरणायें, भाव, स्वयंभू वृत्तियां और इच्छायें गुप्त मन द्वारा संचालित हैं। मन के ही अन्दर पोषक तथा संजीवनी क्रियाओं की उत्पत्ति होती, गुप्त मन के संस्कार और अन्तः प्रेरणा शरीर में पोषण क्रियायें रखती हैं। अन्तर के आदेश ही हमारी पाचन शक्ति को को ठीक रखते, गुर्दे को क्रियाशील बनाते यकृत का महत्वपूर्ण कार्य कराते हैं, मन को ठीक स्थिति में रखमें तथा उससे पूरा-पूरा काम लेने की शक्ति होने के कारण ही मनुष्य का स्थान सब प्राणियों से ऊँचा है।

प्रकृति का नियम यह है कि भोजन शान्त अवस्था में किया जाय तो उसका प्रभाव कल्याणकारी होगा, पर यदि वही भोजन करते समय आप खिचे हुये हों तो इष्ट का प्रभाव भी अनिष्ट हो जायेगा, पेटभर भोजन न किया जा सकेगा। कमजोरी आयेगी, रक्त दूषित होगा, पाचन शक्ति में निर्बलत आ जायगी। खाद्य पदार्थो पर क्रोध के कारण दूषित प्रभाव पड़ता हैं।

कुदरत चाहती है कि हम शान्त रहें, प्रसन्न रहें और आशवादी बने रहें, मस्त और उन्मुक्त बने रहें। ऐसी निर्लिप्त अवस्था में ही दूध, फल, तरकारी, अन्न इत्यादि अपना शुभ प्रभाव दिखाते हैं। मानसिक तनाव या उद्विग्न अवस्था में अन्दर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग अपना कार्य उचित रीति से नहीं कर पाते। सद्विचारों से ज्ञान तन्तु पुष्ट होते हैं। मनोविकारों से उनकी स्वाभाविक शक्ति ठण्डी पड़ती है, प्राण शक्ति का क्षय होता है, शरीर यन्त्र गतिहीन हो जाता है, मनुष्य पशुतुल्य बन जाता है। भोजन के द्वारा स्वास्थ्य एवं जीवाणु तत्व प्राप्त करने हेतु मन को उत्पादक स्थिति में रखना बड़ा कल्याण कारी है।

उस व्यक्ति के स्वास्थ्य की कल्पना कर सकना सरल हैं। जो भोजन करते समय कुढ़ता रहता है, जिसके मुख से कुत्सित शब्दों का उच्चारण होता रहता है और जो नान-मुँह सिकोड़े मानसिक तनाव की अवस्था में जल्दी-जल्दी भोजन ठूँस लेता है, उसे भोजन में क्या स्वाद आवेगा? उस से कैसे पौष्टिक तत्व प्राप्त होंगे? भोजन अपना नैसर्गिक कार्य न कर सकेगा। ईर्ष्या और क्रोध दोनों दाहक है। देह और मन को जलाते हैं। मनुष्य को पनपने का अवसर नहीं

देते। क्रोध से बनी विचार मूर्तियां नीचे-ऊपर, मानस पटल के प्रत्येक कोने पर छा जाती है और मोहाच्छन्न कर देती है।

इन विचार मूर्तियों में एक प्रकार का कम्पन होता रहता है तथा ये जैसी हैं वैसी ही किरणें निकलती रहती हैं, साथ ही जैसे ये विचार मूर्तियां हमारे मानसिक जगत में बनी हैं, वैसे ही उसी क्षण जिसके निमित्त ये बनी हैं, उसकी ओर दौड़ जाती है।

क्रोध के समय आपका मुख मण्डल कैसा रहता है जरा शीशे में देखिये। कैसा मुख लाल हो जाता है, कटु शब्दों का उच्चारण करने से शरीर कांपने लगता है, भुजायें फड़कने लगती हैं। भृकुटी चढ़ जाती हैं, नेत्र लाल हो जाते है, होठ चलने लगते हैं। मन में उद्वग, विकलता, गर्व, उग्रता, अमर्ष इत्यादि अनुभव उदय होते हैं। प्रत्येक मानसिक व्यापार या क्रिया का सम्बन्ध चेहरे के सौन्दर्य से है। मन के विकारों का प्रभाव शरीर के अवयवों पर लक्षित होता है। जिस प्रकार समुद्र के धरातल पर आने वाली सूक्ष्म तरंगों का प्रभाव समूचे समुद्र पर पड़ता है, उसी प्रकार साधारण से लेकर उन्नत एव परिपुष्ठतम विचार हमारी सूक्ष्म पेशियों को प्रभावित किया करते हैं। मन के आदेश से अनेक अहैतुक क्रियायें हम किया करते हैं।

क्रोध सौन्दर्य का शत्रु है, सौन्दर्य में मन का शील, मधुरता, उत्तम स्वभाव, शुभ भावनायें, आध्यात्मिक सजीवनता सम्मिलित है। सौन्दर्य एक आत्मिक गुण है। यदि हम आनन्दमयी वृत्ति में रहेंगे, मन को शुभ कल्पनाओं, पूर्ण निर्दोष, स्वास्थ्यमय शुभेच्छाओं से भरा रक्खेंगे तो हमारे

अन्तर्मन में ये प्रविष्ट हो जायेंगे, पुनः-पुनः इसी भावनाओं का अभ्यास करने से ये हमारे मुखमण्डल पर प्रकट हो जायेंगे। इसके विपरीत यदि हम क्रोधाग्नि में जलते रहेंगे तो अपकारक विकारों या गर्व, उग्रता अमर्ष इत्यादि मानसिक विषों से भरे रहेंगे तो मुख भी विवर्ण हो जायेगा, चेहरा रौद्र रूप धारण कर लेगा। ऐसी भयानक सूरत दिखाकर हम यह प्रगट करते हैं कि हमारे शरीर में मानसिक उद्वेग हो रहा है।

क्रोध रहित होना उच्च जीवन, विचारशीलता और शुभ दैवी अन्तवृत्ति का परिचायक है। क्रोध कुत्सित है, अस्वाभाविक और पाप युक्त है। यह छल, कपट, नीचता, हिंसा, अधर्मता, लज्जा अनीति का जन्म दाता है, तमोगुण का आवरण उत्पन्न कर मनुष्य का दैविक और आध्यात्मिक अहित करने वाला दुष्ट शत्रु है। यह वह विष है जो शरीर के अङ्गों को विगाड़ता, तेज, स्वास्थ्य, कान्ति बल और आयु को क्षीण करता है। क्रोध में अविवेक उत्पन्न होता है।

क्रोध के विषय में डा० बनारसी दास जैन के विचार यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। आप लिखते हैं कि—क्रोध प्रबल हो जाने पर खून में एक प्रकार का विष पैदा हो जाता है जिससे क्रोधी मनुष्य को बहुत हानि होती है। यही कारण है कि क्रोधी प्राय दुर्बल रहते हैं। क्रोधी मनुष्य का खून इतना जहरीला हो जाता है कि उसके खून की एक बूंद खरगोश आदि जीवों के शरीर में पिचकारी द्वारा डालने से उनकी दशा बड़ी खराब हो जाती है। जिस खरगोश के शरीर में उसका प्रयोग किया जाता है वह दूसरे खरगोश को फाड़ खाता है और कभी कभी मर तक जाता है। इससे क्रोध

आत्मघात के तुल्य है। क्रोध में आकर मनुष्य ऐसे-२ काम कर डालता है कि जिससे उसे पछताना पड़ता है तथा सन्ताप सहना पड़ता है।

क्रोधी मनुष्य कभी स्वस्थ्य नहीं रह सकता। उसका चेहरा पीला पड़ जाता है। शरीर सूख कर कांटा हो जाता है। पाचन शक्ति तो बिलकुल ही बिगड़ जाती है जिसके फलस्वरूप शरीर रोगों का घर बन जाता है। क्रोधी मनुष्य की नाड़ी की गति तेज हो जाती है। रगें ऊपर की ओर खड़ी हुई दिखाई देती हैं। क्रोधावेश में वह दांत पीसने लगता, सांस जल्दी-जल्दी चलने लगती है, भौंहे और हाथ सिकुड़ने लगते हैं। उसका शरीर रोमांचित हो जाता है, वाणी बदल जाती है, चेहरा लाल हो जाता है, जबान खुश्क हो जाती है खून में गर्मी पैदा हो जाती है। हारवर्ड मेडीकल कालेज के प्रोफेसर डा० वाल्टर केनिन लिखते हैं कि मनुष्य के दोनों गुर्दो के ऊपर चने के बराबर दो छोटी-छोटी ग्रंथियां होती हैं जिनमें से एक प्रकार का पदार्थ निकलता है जिसे एड्रेलिन कहते हैं। यह पदार्थ जब खून में मिलकर जिगर में पहुँचता है तो वहां जमे हुए ग्लाइकोजन को शकर में बदल देता है। यह शकर खून में मिलकर नाड़ियों द्वारा शरीर के तमाम हिस्सों में पहुच जाती है जो रग और पुटठों में बहुत खिचावट पैदा करती है।'

क्रोध से बचने के उपाय

क्रोध से बचने का स्थायी और वास्तविक उपाय तो यही है कि हम क्रोध के कारण को मालूम करने की कोशिश करे क्रोध का आरम्भ या तो मूर्खता से या दुर्बलता से अथवा

मानव स्वभाव से अनभिज्ञता के कारण होता है। जब कोई व्यक्ति हमारा कहना नहीं मानता या हमारी इच्छा के विरुद्ध काम करता हैं तो हम आपे से बाहर हो जाते हैं और उस पर बेतहाश बरस पड़ते हैं। हम यह समझने की तकलीफ ही नहीं करते कि हमें दूसरों को अपने इच्छानुसार चलाने का क्या अधिकार है। हम अपने प्रतिदिन के अनुभव से भली प्रकार जान सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य की वृत्ति दूसरे मनुष्य से भिन्न होती है, ऐसी हालत में सभी मनुष्य एक ही लाठी से कैसे हांके जा सकते है। मनो विज्ञान के इस अटल सिद्धान्त समझ लें तो हम बहुत हद तक क्रोध के चंगुल से बच सकते हैं और आनन्द से जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

—

धन्यवाद

1100/- रुपये सेठ दुर्गादास, मानवता मन्दिर संस्थापक, होशियारपुर, की पुत्रवधु ऊषा रानी पत्नी स्व० जसवन्त कुमार ने अपने पुत्र कुलवन्त कुमार खुल्लर के बिवाहोत्सव पर 'मनुष्य बनो' पत्रिका को दान स्वरूप भेजे हैं। मालिक से प्रार्थना है कि इस जुगल जोड़ी को सुख-सम्पन्नता एवं दीर्घायु प्रदान करें।

सम्पादक

पावन सूचना

सभी प्रेमी सत्संगी जन को सूचित करते हर्ष हो रहा है। कि हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी वैशाखी का महान पर्व मानवता मन्दिर, होशियारपुर के पवित्र प्रांगण में तिथि 12, 13 व 14 अप्रेल 1994 को अत्यन्त उत्साह के साथ मनाया जाएगा। इस पावन अवसर पर परम पुरुष पूर्ण धनी संत जगद्गुरु हिज होलीनेस हजूर मानव दयाल जी महाराज अपने परा आध्यात्मिक सत्संगों की अमृत वर्षा से समस्त संगत को कृतार्थ करेंगे। साथ ही देश-विदेश से आये हुए आचार्य गण भी अपने अनुभव पूर्ण प्रवचनों से सत्संगी जन को लाभान्वित करेंगे।

सभी सत्संगी भाई-बहनों से निवेदन है कि इस महान पर्व के शुभ अवसर पर पधार कर अपने लोक-परलोक जीवन सुधार के स्वर्णीय अवसर से लाभ उठावें।

सत्संग कार्यक्रम

12-4-94	प्रातः	सत्संग 9 बजे से 11 बजे तक
	सायं	,, 5 ,, ,, 7 बजे तक
13-4-94	प्रातः	,, 8 ,, ,, 11 ,, ,,
	सायं	,, 4 ,, ,, 6 ,, ,,
14-4-94	प्रातः	,, 9 ,, ,, 11 ,, तक

शेष : बाहर से आये हुए सत्संगी जन के ठहरने तथा व्यवस्था ट्रस्ट की ओर से की जाएगी। कृपया साथ लावें।

जनरल सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार
(केन्द्रीय अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के
अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १२ नव०, १९८०

सुधा मित्तल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

BOOK-POST

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान् Sri Chilwar Narsimhlu
Hanmandlu General Stores
V&P.O. Banswada Mandal
Nizamabad - (A.P.)

सुधा मीतल, दातादयाल प्रिन्टर्स, लेखराज ...